भावनात्मक निरक्षरता का युग

डॉ. स्कन्द शुक्ल

जैसे ही सड़क-दुर्घटना में अपने पिता के देहान्त की ख़बर गौरांगी ने सुनी, वह उछल-उछल कर झूमने लगी: "पापा मर गये! पापा मर गये!"

यह दृश्य मन में कल्पित करते ही हम सिहर उठते हैं। लेकिन आधुनिक तकनीकी-प्रधान युग में ऐसी मनोवृत्तियों का तेज़ी से प्रसार हो रहा है। हमारे बच्चे भावनात्मक निरक्षरता के साथ बड़े हो रहे हैं। वे इमोशनली इलिटरेट हैं। और उनमें वह एम्पैथी या समानुभूति नहीं है, जो मानव को मानव से जोड़ती है और उसमें समाज के प्रति उत्तरदायित्व-बोध भरती है।

बहुधा लोग सिम्पैथी और एम्पैथी में अन्तर नहीं समझते। अँगरेज़ी का सिम्पैथी हिन्दी में सहानुभूति के रूप में जाना जाता है। सिम्पैथी-सहानुभूति अर्थात् किसी के कष्ट को देखकर विचलित होना। किन्तु एम्पैथी अपेक्षाकृत नया और कम प्रचलित शब्द है, जिसके लिए हिन्दी में एक शब्द गढ़ा गया है 'समानुभूति'। यह समानुभूति स्वयं को कष्टित होते व्यक्ति के स्थान पर रखकर देखना है। यह केवल किसी के दुःख को देखकर दुःखी होने से कहीं गहरी किन्तु स्थिर बात है। किसी के दुःख पर तरस खाना एक सतही प्रतिक्रिया है। किन्तु किसी के दुःख को अनुभूत कर सकना, हमारे मस्तिष्क के भीतर अनेकानेक बदलाव पैदा करता है।

लगभग तीन दशक पहले जियाकोमो रिज़ोलाटी एवं विटोरियो गेलीज़ नाम के दो इतालवी वैज्ञानिकों ने मस्तिष्क में मिरर न्यूरॉनों यानी दर्पण-तन्त्रिकाओं को खोज निकाला। ये दर्पण-तन्त्रिकाएँ हमारे भीतर एम्पैथी यानी समानुभूति के विकास की कोशिकीय कथा कहती हैं। जब हम किसी व्यक्ति को कोई कार्य करते देखते हैं, तो उसके मस्तिष्क के भीतर तन्त्रिकाओं का एक समूह कार्य कर रहा होता है। मान लीजिए कोई व्यक्ति प्लेट में रखी कोई वस्तु खा रहा है। ज़ाहिर है कि प्लेट से वस्तु को उठाने व खाने में तन्त्रिकाओं का योगदान है। इन तन्त्रिकाओं के कारण व्यक्ति वस्तु को प्लेट से उठाता, मुँह में रखता और अन्त में खा पाता है।

मैं इस व्यक्ति के सामने बैठा हूँ। इसे खाते देखकर मेरे मस्तिष्क में भी इसी कार्य की हलचल होने लगी है। मैं भी इसी वस्तु को खाने के विषय में सोच रहा हूँ। मेरे मस्तिष्क के भीतर हू-ब-हू तन्त्रिकाओं का वही समूह सक्रिय हो चला है,

जो खा रहे व्यक्ति में सक्रिय है। लेकिन मेरी ये तन्त्रिकाएँ दर्पण-तन्त्रिकाएँ हैं। ये सामने भोजन कर रहे व्यक्ति की कार्यरत तन्त्रिकाओं की नकल कर रही हैं।

दर्पण-तन्त्रिकाओं का कार्य इतना-भर नहीं है। यान्त्रिक कार्यों के अलावा भावनात्मक समानुभूतियों में भी ये योगदान देती हैं। सामने बैठे व्यक्ति को अगर सुई चुभती है, तो उसे दर्द होता है। यह दर्द भी उसका मस्तिष्क तन्त्रिकाओं के कारण महसूस कर पाता है। किन्तु मेरी दर्पण-तन्त्रिकाओं के कारण उस दर्द की समानुभूति मुझे भी हो सकती है। इस तरह से मस्तिष्क के अलग-अलग हिस्सों में मौजूद दर्पण-तन्त्रिकाएँ यान्त्रिक अथवा आनुभूतिक नकल में योगदान देती हैं।

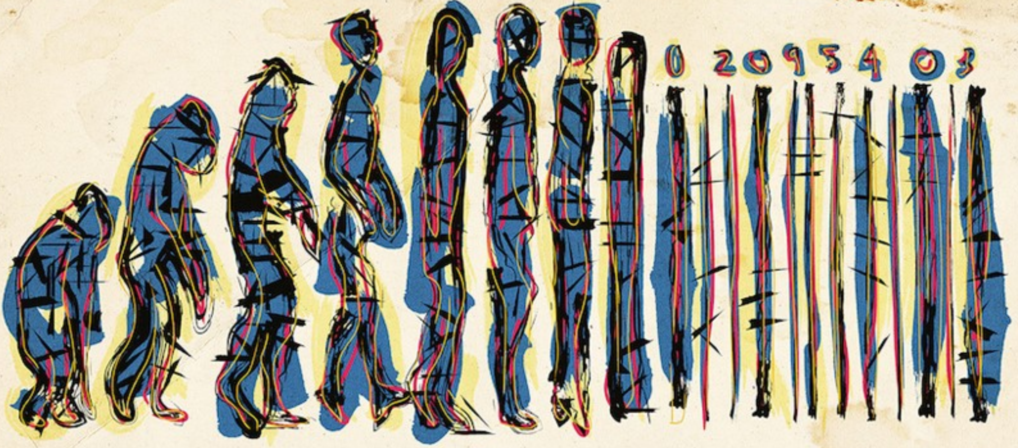

दर्पण-तन्त्रिकाओं का मानव-समानुभूति के विकास में योगदान कितना है, इस पर वैज्ञानिक कार्यरत हैं। कोई भी नयी खोज हमें उत्तेजित अधिक करती है, जागरूक कम। इन कोशिकाओं के न विकसित होने से किन-किन रोगों और कैसे-कैसे मनोविकारों की निर्मिति होती है, यह गम्भीर ज्ञान हमारे लिए ज़रूरी है। जानकर ही हम बेहतर समाज के लिए इन कोशिकाओं का आवश्यक विकास और स्वास्थ्य सुनिश्चित कर सकते हैं। लेकिन अनेक शोध यह भी बताते हैं कि नयी मानव-पीढ़ियों में उत्तरोत्तर भावनात्मक साक्षरता न्यून से न्यूनतर होती जा रही है। लोग विज्ञान ख़ूब पढ़ रहे हैं, इंसान नहीं पढ़ पा रहे। (जीव-जन्तु, पेड़-पौधों और ऋतुओं को तो फिर क्या ही पढ़ेंगे!)

एक समाज के तौर पर हम-सभी में समानुभूति घट रही है। साइंस-टेक्नोलॉजी-इंजीनियरिंग-मैथेमैटिक्स की पढ़ाई अर्थकारी है, अधिकांश माँ-बाप अपने बच्चों को इन विषयों की ओर धकेलते हैं। हिन्दी में नम्बर कम आएँ, कोई बात नहीं! मैथ्स में अव्वल रहना ज़रूरी है! स्कूली पढ़ाई के अलावा घरेलू व सामाजिक जीवन में भी तकनीकी इस क़दर बचपन से ही लोगों के संग रहने लगी है कि वह यन्त्रवत् होते जा रहे हैं। बच्चे बच्चों के साथ नहीं खेलते, वे जानवरों और पेड़पौधों के साथ समय नहीं बिताते। दादा-दादी-नाना-नानी का संग उनमें पहले की तरह कहाँ उपलब्ध होता है?

बचपन भावनात्मक रूप से साक्षर और फिर शिक्षित हो, इसके लिए आवश्यकता है कि वह नीचे देखते हुए नहीं, ऊपर देखते हुए वृद्धि करे। हमारे बच्चे सेलफ़ोनों में गड़कर बढ़ रहे हैं, जबकि उन्हें ऊँचे मानव-सम्बन्धियों के चेहरे पढ़ते हुए, जानवरों की गतिविधियाँ देखते हुए और पेड़ों को झूमते हुए देखते

बड़े होना चाहिए। नतीजन वे समानुभूतिक विकलांगता के शिकार होते जा रहे हैं। एक ऐसी विकलांगता, जिसके लिए उनके माँ-बाप, परिवार और समाज हर तरह से उत्तरदायी हैं।

बच्चों की सफलता गणित में नापी जा रही है। सब-कुछ तुलनात्मक है और तुलना का आधार गणित है। हर बात, गुण, व्यक्ति, सम्बन्ध को संख्या-बोध से समझा जा रहा है। शिक्षा की कसौटी अंक हैं और अंक मेधाविता के प्रतिनिधि हैं। मेधावी को भौतिक जगत् में समृद्धि मिलने की पूरी सम्भावना है; चाहे इस समृद्धि में समानुभूति शामिल हो अथवा न हो। हम सफल हों: अन्य जहाँ जूझ रहे हैं, जूझा करें!

महानगरीय सड़कों पर घायल लहूलुहान आदमी के अगल-बगल से तेज़ रफ़्तार में निकलती गाड़ियों के मूल में भी यही समृद्धि की चाह और समानुभूति का ह्रास है। असमानभूत समृद्ध व्यक्ति बड़ी-बड़ी कम्पनियों के सीईओ-पदों पर आसीन हैं; वे आपकी भौतिक मूल्यवत्ता तय कर रहे हैं। उनके सामने आपके आँकड़े हैं, आपके काम का ग्राफ़ है। वे गणित के प्रकाश में आपको देखते हैं। अगर आप उसमें जगमगाते हैं, तो आप हीरे हैं। अगर नहीं, तो आप मिट्टी के डले। भला ऐसी कौन सी सफलता, कौन सा मूल्य है और कौन सा विकास है जो गणित के पैमाने से न नापा जा सके।

स्टेम विषयों में आप मेडिसिन को न पाएँगे लेकिन डॉक्टरों का सम्बन्ध भी गैजेटों से अधिकाधिक बढ़ता जा रहा है। विज्ञान ने स्वास्थ्य की समझ को तकनीकी से ऐसा जोड़ दिया है कि समानुभूति पर सोचना और बात करना तो गये ज़माने की बात मानी लगी हैं। अस्पताल नयी-नवेली मशीनों से लैस होते जा रहे हैं, जहाँ रोगों को रोगियों पर तरजीह दी जाती है। चिकित्सा की पूरी पढ़ाई और निदानोपचार बीमारी को केन्द्र में रखकर होते हैं, बीमार बेचारा इसमें कहीं दूर-दूर तक नज़र नहीं आता!

गौरांगी के प्यारे पापा जब तक जीवित थे, हॉलीवुड-फिल्में ख़ूब देखते थे। वे फिल्में जिनमें भावनाशून्य चेहरे वाले हीरो का आयक्यू डेढ़ सौ पार होता है और वह किसी टेकफ़र्म में दिन में उच्च पद पर काम करता है। किन्तु खाली समय में वह मनोरंजन के लिए जानवरों को मायक्रोवेव में भूनता है और मानव-हत्याओं को अंजाम देता है। उन्होंने गौरांगी को अपने जीते-जी कभी समय नहीं दिया और उसे गैजेटों के बीच में बढ़ने के लिए छोड़ दिया।

आज वे इस दुनिया में नहीं हैं। उनकी नन्ही बिटिया उसी गैजेट में गेम खेलकर जीवन-मृत्यु को बूझ रही है, जहाँ हीरो के पास तीन या चार लाइफ़लाइन होती हैं। पापा उसे यन्त्र में ले गये थे, अब वह पापा की मृत्यु को खेल का एक पड़ाव ही समझ रही है। अगर गौरांगी-जैसे बच्चे हमारे आसपास भावनात्मक निरक्षरता के साथ बड़े हो रहे हैं, तो सायकोपैथीय यौवन बहुत दूर नहीं। यह भयावह प्रतीक्षा शीघ्र पूरी होने को है। हम हर तरह से अमेरिका ही बनेंगे, क्योंकि हमने सर्वोत्तम आदर्श अमेरिकी भौतिक उच्चता को ही तो बनाया है!